मस्जिद की आबादी की मेहनत

हज़रत मौलाना मुहम्मद सआद साहब कान्धलवी

मस्जिद की आबादी की मेहनत

हज़रत मौलाना मुहम्मद सअ़द साहब कान्धलवी

तर्तीब

मौलाना मुहम्मद अली

"अस्बाब पर निगाह करके, अल्लाह से उम्मीद रखना, कुफ़्र का रास्ता है।"

(हज़रत मौलाना मुहम्मद यूसुफ़ साहब रह०)

फ़रीद बुक डिपो (प्रा०) लि०

मस्जिद की आबादी की मेहनत

हज़रत मौलाना मुहम्मद सअ़द साहब कान्धलवी

तर्तीब

हज़रत मौलाना मुहम्मद अली

(प्रकाशक)

فرید بکڈپو (پرائیویٹ) لمٹیڈ

FARID BOOK DEPOT (Pvt.) Ltd.

Corp. Off : 2158, M.P. Street, Pataudi House, DaryaGanj, New Delhi-2
Phone : (011) 23289786, 23289159 Fax : +91-11-23279998
E-mail : faridexport@gmail.com - Website : www.faridexport.com

Masjid ki Aabadi ki Mehnat

Hazrat Maulana Muhammad Sa'ad Sahab Kandhlavi

Compiled by:
Maulana Muhammad Ali

Edition: **2015**

Pages: **224**

Our Branches:

Delhi : Farid Book Depot (Pvt.) Ltd.
422, Matia Mahal, Jama Masjid, Delhi-6
Ph.: 23256590

Mumbai : Farid Book Depot (Pvt.) Ltd.
216-218, Sardar Patel Road, Near Khoja Qabristan,
Dongri, Mumbai-400009
Ph.: 022-23731786, 23774786

Printed at : Farid Enterprises, Delhi-2

मुहतरम अज़ीज़ो! मुसलमानों की एक चूक (गलती) ने हम मुसलमान को नाकाम बना रखा है। हम सबकी वह चूक दुरूस्त (सही) हो जाए, यह किताब इसलिए लिखी गई है।

अब रही बात यह कि आख़िर मुसलमानों से क्या चूक हो गई? तो चूक यह हो गई, कि हम मुसलमानों के अंदर से ईमान के सीखने और ईमान के सिखलाने का रिवाज ख़त्म हो गया है। आज मुसलमानों ने सब कुछ सीखा, पर ईमान को नहीं सीखा। सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन फ़रमाते हैं कि हमने सबसे पहले ईमान सीखा फिर कुरआन को सीखा। आज उम्मत ईमान को सीखे बग़ैर, नमाज़ों से और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वाले आमालों से फ़ायदा हासिल करना चाह रही है। जो कि ना–मुम्किन है। किताब में लिखे हुए वाक़िआत और हदीसों को मुसलमान दावत में और अपने ग़ौर व फ़िक्र में लाकर अपने अंदर अल्लाह से होने का गुमान पैदा कर लें, ताकि मुसलमानों के काम दुआओं के रास्ते से बनने लगें। इसलिए कि अल्लाह तआला से काम बनवाने का रास्ता गुमान है–

أنا عند ظن عبدي بي

अल्लाह तआला फ़रमाते हैं: कि मेरा बंदा मुझसे जैसा गुमान करेगा, मैं उसके साथ वैसा ही मामला करूंगा। अगर इंसान के अंदर माल से होने का गुमान है तो उसका काम माल से होगा और अगर दुनिया में फैली हुई चीज़ों और सामान से काम होने का गुमान है तो उस रास्ते से होगा। इस गुमान का नुक़सान यह है कि आदमी के अन्दर जिस चीज़ से होने का गुमान होगा, वह उसी चीज़ का मुहताज होगा।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन के अन्दर सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह ही से होने का गुमान पैदा कराया था। जिसकी वजह से सहाबा रज़ि० के अंदर अल्लाह की मुहताजगी थी कि हर वक़्त हर

आन हर लम्हा वह अपने आप को अल्लाह का मुहताज समझते थे। वह सहाबा रज़ि० वाली बात और सहाबा रज़ि० वाला गुमान, हम मुसलमानों के अंदर पैदा हो जाए, इसके लिए जिस तरह से हज़रात सहाबा किराम ने मस्जिद को आबाद करने वाली मेहनत की थी। हम मुसलमानों को भी *"मस्जिद की आबादी की मेहनत"* में सबसे पहले ईमान को सीखना पड़ेगा। वह भी इस तरह से जिस तरह से हज़रत मौलाना मुहम्मद सअ़द साहब फ़रमा रहे हैं। इसलिए हज़रत मौलाना का बयान जो किताब में लिखा गया है यह ईमान को सीखने में हमारी मदद करेगा, मस्जिद को आबाद करने वाली मेहनत के साथ हम सबको किताबों में लिखी हुई बातों को अपनी रोज़ाना की बातचीत में लाना पड़ेगा। हर जगह नुसरत के वाक़िआ़त और ग़ैबी निज़ाम की बातें सुनानी हैं और इतनी सुनानी है कि यह चीज़ रिवाज में आ जाए।

इसलिए कि मेरे दोस्तो! ईमान न सीखने की वजह से, इंसान इम्तिहान की चीज़ों से इत्मिनान हासिल करना चाहता है। जब कि इत्मिनान का हासिल होना अल्लाह तआ़ला ने जिस्म के सही इस्तेमाल पर रखा है। हमारे जिस्म के आज़ा (हिस्से) अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी पर उनके हुक्मों पर इस्तेमाल होने लगें, कि आंख, कान, ज़ुबान, दिमाग़, हाथ, पैर और शर्मगाह हराम से बच जाए। इसके लिए मस्जिदों में ईमान के हल्क़े लगाकर अल्लाह की ज़ात और उसकी सिफ़ात का यक़ीन पैदा करना पड़ेगा।

मेरे दोस्तो! आज मुसलमान हलाल कमाने के बावुजूद, हलाल खाने के बावुजूद और हलाल पहनने के बावुजूद हराम बोल रहा है, हराम देख रहा है, हराम सुन रहा है और हराम सोच रहा है। ईमान को न सीखने ही कि यह वजह है कि आज हम अपने ईमान से बे-परवाह हैं अगर हमें ईमान की परवाह होती, तो हम हराम से बच रहे होते। इसलिए कि मुस्लिम शरीफ़ की हदीस है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया : 'कि जब किसी मोमिन से गुनाह कबीरा हो जाता है, तो ईमान का नूर उसके दिल से निकलकर उसके सर पर साया कर लेता है, जब तक वह तौबा नहीं करता, वह नूर उसके जिस्म में वापस नहीं आता है।'

अब हमें यह कैसे पता चले कि गुनाह कबीरा क्या है? इसलिए कि गुनाह कबीरा की फ़ेहरिस्त (सूची) किताब के आख़िर में लिखी गई है। आप हज़रात उसे देखकर अमल में लाएं।

रिज़वान ज़हीर ख़ान

(बयान)

हज़रत मौलाना मुहम्मद सअ़द साहब

6 दिसमबर 2009 ई० दिन इतवार सबुह 10 बजे

जगह : ईट खेड़ा, (भोपाल)

﴿إِنَّمَا يَعْمُرُ مَسَاجِدَ اللَّهِ مَنْ آمَنَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَأَقَامَ الصَّلَاةَ وَآتَى الزَّكَاةَ وَلَمْ يَخْشَ إِلَّا اللَّهَ فَعَسَىٰ أُولَٰئِكَ أَنْ يَكُونُوا مِنَ الْمُهْتَدِينَ﴾ (توبہ:١٨)

"हां अल्लाह की मस्जिदों को आबाद करना उन लोगों का काम है, जो अल्लाह पर और कियामत के दिन पर ईमान लाएं, और नमाज़ की पाबन्दी करें और ज़कात दें और बजुज़ अल्लाह के किसी से न डरें, सो ऐसे लोगों की निस्बत तौकेअ (यानी वायदा) है कि अपने मक़्सूद तक पहुंच जाएंगे।" *सूरः तौबा, 18*

कहीं ऐसा न हो कि यह इज्तिमआ मेला बनकर रह जाए

मेरे मुहर्तम दोस्तों बुजुर्गों! हर साल के इज्तिमआ का यहां (भोपाल में) एक मामूल बन गया है, ऐसा न हो कि कहीं हम रिवाज की तरफ़ जा रहे हों। मौलाना इलयास साहब रह० फ़रमाते थे कि इस काम में लगने वालों की अगर जुहर और असर की नमाज़ों के दर्मियान कोई फ़र्क़ नहीं है तो फिर काम करने वाला तजल्ली पर है, तरक़्क़ी पर नहीं। अगर जुहर और असर के दर्मियान फ़र्क़ है तो इस काम में चलने वाला तरक़्क़ी कर रहा है। जुहर, असर की नमाज़ का फ़र्क़ इस काम में सिर्फ़ नमाज़ ही में नहीं देखना है बल्कि पूरी ज़िंदगी में देखना है कि जुहर के बाद असर पढ़ने के दर्मियान ज़िंदगी कैसे गुज़री? इसलिए यह गौर करो, कि—

हमने इस काम से अब तक क्या कमाया है? और
हमारे अन्दर क्या तब्दीली आई?
कहीं ऐसा न हो, कि यह इज्तिमआ मेला बनकर रह जाए।

हमारा जमा होना, नुबूवत और दावत की निस्बत पर है

मेरे दोस्तो! हमारा जमा होना तो बड़ी आली निस्बत पर है, कि दावत नुबूवत की निस्बत है, इससे बड़ी कोई निस्बत अल्लाह ने पैदा ही नहीं की है। कि जिस काम के लिए नबियों का इंतिख़ाब (चुना) किया जाए, इस काम से बड़ा कोई नहीं हो सकता। तो हमारा जमा होना बड़ी ऊंची निस्बत पर है। जिस निस्बत पर हम जमा हुए हैं उसी निस्बत पर हमारा बिखरना भी हो। अगर हमारा बिखरना इस निस्बत के अलावा है तो हमारा जुड़ना भी इस निस्बत पर नहीं होगा कि हमारा जमा होना नुबूवत और दावत की निस्बत पर है। यह हमारे जुड़ने और जमा होने की वजह है। इसलिए यह बात सबके ख़्याल में रहे कि यह इबादत की और ज़िक्र की वह मज्लिस है, जिसको फ़रिश्तों ने अपने परों से आसमान तक ख़ुदा की क़सम! घेरा हुआ है। हमें फ़रिश्ते नज़र नहीं आ रहे है पर यह बात सच्ची और पक्की है इसलिए कि यह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़बर है। बात सिर्फ़ इतनी है कि अल्लाह ने हमारा इम्तिहान के लिए इन फ़रिश्तों को हमारी नज़र से छुपाया हुआ है। वरना यह बात बिल्कुल हक़ है कि इस वक़्त फ़रिश्तों ने आसमान तक हम सबको अपने परों से ढका हुआ है। यह ज़िक्र की मज्लिस है इस मज्लिस में बैठने का इस तरह एहतिराम होना चाहिए, जिस तरह नमाज़ में तशहहुद (अत्तहियात) में बैठने वालों की कैफ़ियत होती है।

दावत हो।
तब्लीग़ हो।
तालीम हो।

ये सब ज़िक्र की मज्लिसें हैं और ज़िक्र की मज्लिस की ख़सूसियत यह हैं कि अगर ज़िक्र इज्तिमाई किया जाए, तो अल्लाह तआला अपने बंदों का ज़िक्र फ़रिश्तों के इज्तिमाई माहौल में करते हैं और अगर अल्लाह तआला का ज़िक्र तंहाई में किया जाए तो अल्लाह तआला इस बंदे को ख़ुद याद करते हैं।

बैठकर बात का सुनना किसी तब्दीली का ज़रिया बने, वरना तक़रीरें और बयान, यह दावत का मिज़ाज ही नहीं है

इसलिए मेरे अज़ीज़ दोस्तो! मुझे अर्ज़ करना है कि पूरा मज्मा मुतावज्जोह

(ध्यान लगाकर) होकर यकसूई से और एहतिराम से अपने आपको इबादत में यक़ीन करते हुए बैठे। ताकि बैठकर बात का सुनना किसी तब्दीली का ज़रिया बने, वरना तक़रीरें और बयान, यह दावत का मिज़ाज ही नहीं है। कि दावत का तक़ाज़ा यह है कि इस्लाम की निस्बत पर जमा होना और इस्लाम की निस्बत पर बिखरना। इसलिए बात को बहुत ध्यान के साथ सुनना। जो बात सुनो वह अमल के इरादे से हो और फिर इसकी दावत दो। क्योंकि इसमें कोई शक नहीं है कि जो दावत और अमल दोनों काम बराबर करेगा, उससे अच्छा इस्लाम किसी का नहीं होगा।

﴿وَمَنْ أَحْسَنُ قَوْلًا مِّمَّن دَعَا إِلَى اللَّهِ وَعَمِلَ صَالِحًا وَقَالَ إِنَّنِي مِنَ الْمُسْلِمِينَ﴾

उलमा ने लिखा है कि दावत और अमल दोनों का इकट्ठा जमा करना दीन को सबसे अच्छा बना देता है। मेरी बात समझना आप हज़रात के लिए थोड़ा मुश्किल काम होगा, पर मुझे यह इसलिए कहना पड़ा है कि हमारे मज्मे के अंदर दावत के एतबार से क़ुव्वत आए पुख़्तगी आए। कि—

क्यों दावत दी जाए?
क्यों तालीम की जाए?
क्यों नक़्ल व हरकत को उम्मत में ज़िंदा किया जाए?
क्या वजह है इस काम के करने की?

इसलिए मैं यह बात अर्ज़ कर रहा हूं कि इस्लाम में हुस्न लाने का रास्ता ही यही है, क्योंकि अल्लाह तआला ख़ुद फ़रमा रहे हैं कि उससे अच्छा इस्लाम किसी का हो ही नहीं सकता जो दावत देते हुए अमल करे। हमारे दावत देने की बुनियाद यही है, सिर्फ़ दूसरों की इस्लाह मक़सूद नहीं है बल्कि दावत के ज़रिए अपना ताल्लुक़ अल्लाह के साथ बढ़ाना और अपनी इबादत में कमाल पैदा करना है, यह दावत देने की वजह है।

इसलिए मेरे दोस्तों, बुज़ुर्गों, अज़ीज़ो! यह बुनियाद जितनी पुख़्ता और मज़बूत होगी, उतनी अस्बाबे तर्बीयत, अस्बाबे हिदायत, उम्मत में आम होगी, क्योंकि दीन पर इस्तिक़ामत (जमे रहना) और हर क़िस्म के बातिल से टकराकर दीन की

हिफ़ाज़त का सिर्फ़ यही रास्ता है कि उम्मते मुस्लिमा सौ फ़ीसद अपने दीन की दावत में क़ायम हो जाए। अगर उम्मत ने दूसरों को दावत देनी छोड़ दी, तो उम्मत बहुत क़रीब इस ख़तरे में है, इंफ़िरादी तौर पर भी और इज्तिमाई तौर पर भी कि उम्मत अपने दीन की दावत को छोड़ने से बातिल की मदऊ हो जाए।

उम्मत दावत छोड़ देगी तो फिर यह बातिल की मदऊ होने लगेगी।

मैं आप हज़रात से हज़रत रह० की बातें नक़ल कर रहा हूं। हज़रत रह० फ़रमाते थे, कि जब यह उम्मत दावत छोड़ देगी तो फिर यह उम्मत बातिल (गुनाहों) की तरफ़ मदऊ होने लगेगी। क्योंकि उम्मत दो हाल में से एक को इख़्तियार करेगी कि या तो दाई (दावत देगी) होगी या मदऊ होगी यानी या कोई हमें दावत दे रहा होगा या हम किसी को दावत दे रहे होंगे। अपने दीन पर इस्तिक़ामत का और अपने दीन की हिफ़ाज़त का, इसके इस्तेदाद उम्मत में इस वक़्त तक रही जब तक यह अपने दीन की दावत पर मुज्तमआ (इकट्ठी) थी।

इसलिए दिल की गहराइयों से इस बात को समझना होगा कि उम्मत के किसी भी ज़माने में, किसी भी क़िस्म के ख़सारे (नुक़सान) से निकलने का दावत के सिवा कोई रास्ता नहीं है कि उम्मत का आख़िर उस वक़्त नहीं सुधरेगा, जब तक उम्मत वह न करे जो उम्मत के पहलों ने किया था। अगर हम उम्मत के ख़सारे से निकलने और हालात के हल के लिए, उस काम से हटकर कोई भी रास्ता सोचे तो यह हमारे सोच, नुबूवत की सोच से अलग होगी। और यह हमारी सोच अलग ही नहीं होगी बल्कि हमारा रास्ता ही बदल देगी, हम यह समझेंगे कि सहाबा रज़ि० ने जो काम अपने ज़माने में किया था और वह और काम था और हम जो यह काम कर रहे है यह वह काम है।

इसलिए बहुत ही ध्यान और तवज्जोह से मेरी बात सुनो! मेरा दिल यह चाहता है, अगर तीन दिन लगाने वाला भी इस काम के साथ हो तो इस काम के साथ उसके दिल का यक़ीन यह हो कि–

तर्बीयत का
तवज्जोह का

हिदायत का

और अल्लाह की ज़ात के साथ ताल्लुक़ के पैदा करने का यही रास्ता है। अगर उस यक़ीन में ज़रा भी कमी आई, तो दावत वाले आमाल की तासीर और दावत वाले आमाल से फ़ायदा नहीं उठा सकेगा। हज़रत रह० फ़रमाते थे कि इस काम से ताल्लुक़ की निशानी यह है कि जिस दिन कोई दावत का अमल छूट जाए, उस दिन उसको अपनी इबादत में ऐसी कमी महसूस हो, ऐसी कमज़ोरी महसूस हो, जिस तरह दावत की गिज़ा न मिलने से जिसमानी कमज़ोरी महसूस होती है। कि दावत वाले आमाल, इबादत के लिए इस तरह ताक़त का ज़रिया हैं, जिस तरह जिसमानी गिज़ा जिस्म में कुव्वत पहुंचाने का ज़रिया है। यह हमारे दिल का यक़ीन होना चाहिए और यही बात हम अपने सारे–

बयान करने वालों से।
गश्त करने वालों से।
मशिवरा करने वालों से।
मुलाक़ातें करने वालों से।
मुज़ाकरा करने वालों से।

यह बात हम उन सब से कहलवाना चाहते हैं कि–

हमारा इस काम के साथ यक़ीन क्या है?
हमारा गश्त किस यक़ीन पर हो रहा है?
मेरा तालीम में बैठना किस यक़ीन पर हो रहा है?
कि तब्लीग़ के प्रोगराम की बुनियाद पर है या तर्बीयत या हिदायत के यक़ीन पर है।

''उम्मत'' या तो उम्मते अजाबत (दावत क़बूल करने वाली) होगी या उम्मते दावत (दावत देने वाली) होगी।

जब यह उम्मत दावत छोड़ देगी तो फिर यह उम्मत बातिल की तरफ़ मदद्‌ होने लगेगी इसलिए मेरे अज़ीज़ो और दोस्तो! मैं यहां पर बहुत सी बुनियादी बातें अर्ज़ करना चाहता हूं कि हमारे दिल की गहराइयों में यह बात उतरी हुई हो कि चाहे उम्मते अजाबत हो या उम्मते दावत हो (यानी मुसलमान हो या मुसलमान के

अलावा सारी कौमें हों) इस सब के हर किस्म के ख़सारे (नुक़सान) निकलने में सिवा दावते इल्ल–लाह (अल्लाह की तरफ़ बुलाना) के कोई रास्ता नहीं है। अल्लाह तआला ने कुरआन में यह बात क़सम खाकर फ़रमा दी–

﴿وَالْعَصْرِ إِنَّ الْإِنْسَانَ لَفِي خُسْرٍ إِلَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ﴾

"क़सम है ज़माने की (जिसमें नफ़ा और नुक़सान वाक़ेअ होता है) कि इंसान बड़े ख़सारे में है, मगर जो लोग ईमान लाए और इन्होंने अच्छे काम किए (कि यह कमाल है) और एक दूसरे को एतिक़ादे हक़ (पर क़ायम रहने) की फ़हमाइश करते रहे और एक दूसरे को (आमाल की) पाबन्दी की फ़हमाइश करते रहे"

"कि सारी की सारी इंसानियत (तमाम इंसान) ख़सारे में है ख़सारे से बचने और ख़सारे से निकलने के सिर्फ़ चार अस्बाब है। यह चार अस्बाब आपस में बराबर की अहमियत रखते हैं, यह नहीं कहा जाएगा कि उन ख़सारों से निकलने के लिए कौन–सा सबब ज़्यादा ज़रूरी है, कौन–सा सबब कम ज़रूरी है। यह चारों अस्बाब ख़सारे से निकलने के लिए, बिल्कुल ऐसे हैं, जिस तरह इंसान के लिए–

आग,
हवा,
पानी, और
गिज़ा (खाना) ज़रूरी हैं।

निजात के अस्बाब चार चीज़ें हैं

इससे कहीं ज़्यादा ज़रूरी ख़सारे से निकलने के लिए, यह चारों अस्बाब हैं कि उनके बग़ैर ज़िंदगी की कोई माड़ी नहीं चलेगी। इस बात को अल्लाह ने क़सम खाकर फ़रमा दिया कि सारी की सारी इंसानियत ख़सारे में है सिवाए उन लोगों के जो चार काम करें।

﴿إِلَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ﴾

"जो लोग ईमान लाए और इन्होंने अच्छे काम किए (कि यह कमाल है) और एक दूसरे को एतिक़ादे हक़ (पर क़ायम रहने) की फ़हमाइश करते रहे और एक दूसरे को (आमाल की) पाबन्दी की फ़हमाइश करते रहे"

(1) ईमान लाए, यह पहला काम।

(2) आमाले सालेह (नेक काम) करें।

(3) दूसरे को ईमान पर आमादा करें।

(4) दूसरों को आमाले सालेह (नेक आमाल) पर आमादा (राज़ी) करें।

यह चारों काम करने वाले ही निजात पाएंगे, कि ईमान लाए, आमाले सालेह करें, और दूसरों को ईमान और आमाले सालेह पर आमादा भी करें। निजात के अस्बाब सिर्फ़ दो नहीं है कि ईमान लाए और आमाले सालेह करें, बल्कि निजात के अस्बाब चार चीज़ें हैं

﴿إِلَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ﴾

(1) ईमान।

(2) आमाले सालेह नेक आमाल)।

(3) تَوَاصَوْا بِالْحَقِّ

(4) تَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ

यह चार चीज़ें मिलकर निजात के अस्बाब हैं।

तमाम शक्लों को लात मारी सिर्फ़ अपने दीन की हिफ़ाज़त के लिए

मेरे अज़ीज़ दोस्तों और बुज़ुर्गों! हम उम्मत के हर फ़र्द (इंसान) को दावत पर इसलिए लाना चाहते हैं, ताकि यह अपने दीन की दावत से अपने दीन पर क़ायम रहें। क्योंकि दीन पर इस्तिकामत, दीन की दावत से बाक़ी रहती है। हमें यह अंदाज़ा हो कि सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हु उस ज़माने में जो चीज़ें पेश की गई, वही चीज़ें आज पूरी दुनिया में मुसलमानों को पेश की जाती हैं। इन तमाम शक्लों को लात मारी सिर्फ़ अपने दीन की हिफ़ाज़त के लिए और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के किसी भी एक तरीक़े से हटने के लिए तैयार न हुए। हज़रत अब्दुल्लाह बिन हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु को क़ैद किया गया और रूम के बादशाह ने उन्हें नसरानियत (इसाइयत) की दावत दी कि आप ईसाई हो जाएं तो मैं अपनी आधी बादशाही आपको दे दूंगा। हज़रत अब्दुल्लाह बिन हुज़ैफ़ा

रज़ि० ने फ़रमाया कि तुम्हारी आधी बादशाहत नहीं तेरी पूरी बादशाहत और उसके अलावा की सारी बादशाहत भी मुझे अगर मिले तो मैं पलक झपकने के बराबर भी मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के किसी एक तरीक़े को छोड़ने के लिए तैयार नहीं। तो रूम के बादशाह ने उन्हें गर्म पानी में डालने की तदबीर की, तो हज़रत अब्दुल्लह बिन हुज़ैफ़ा रज़ि० पानी देखकर रोए। बादशाह ने यह समझा कि यह घबरा गए, तो बादशाह ने फिर उनसे कहा कि नसरानी हो जाओ, यह सुनकर उन्होंने फिर इंकार कर दिया और फ़रमाया कि मेरे रोने की वजह यह है कि मैं अल्लाह को एक जान क्या पेश करूं, मैं तो अपनी जान की हिकारत (कमी पर) पर रो रहा हूं न कि जान की मुहब्बत में रो रहा हूं। अगर मेरे पास मेरे जिस्म के बालों के बराबर जानें होतीं तो मैं एक–एक करके सब अल्लाह के लिए क़ुरबान करता।

यह वाकिआत तो हम सुनते हैं, लेकिन हमने कभी यह ग़ौर नहीं किया कि सहाबा रज़ि० के अंदर यह इस्तेदाद (ताक़त) कैसे पैदा हुई? आज उम्मत की यह सलाहियत कैसे ख़त्म हो गई इसकी क्या वजह है? मेरे अज़ीज़ों दोस्तों और बुज़ुर्गो!

यह वह दावत है जो इस उम्मत के ज़िम्मे फ़र्ज़ ऐन है

मैं मुग़ालते के तौर पर नहीं अर्ज़ कर रहा हूं बल्कि तारीख़ इसकी गवाह है कि जब उम्मत अल्लाह की तरफ़ बुलाना छोड़ देगी तो सबसे पहली जो मुसलमानों को कमज़ोरी पैदा होगी, वह यह कि अपने दीन को हल्का समझने और अपने दीन को दुनिया के बदले बेच देगी, यह सिर्फ़ दावत को छोड़ने का नतीजा होता है, कि जब उम्मत इज्तिमाई (एक साथ इकट्ठे होकर) तौर पर दावते इल्ललाह (अल्लाह की तरफ़ बुलाना) को छोड़ देती है कि ऐसा होता है इसलिए यह बात भी हमें समझनी चाहिए कि दावत इल्लल्लाह उम्मत का इज्तिमाई फ़रिज़ा है, जिस तरह नमाज़ इज्तिमाई फ़रिज़ा है, यह इंफ़िरादी (अकेले का) फ़रिज़ा नहीं है। यह वह दावत है जो इस उम्मत के ज़िम्मे फ़र्ज़ ऐन (बहुत ज़्यादा ज़रूरी, जिसको ख़ुद ही करना पड़ता है) है, फ़र्ज़ किफ़ाया (जिसको दूसरे कर दे तो अदा हो जाता है) नहीं है। मेरा यह बात कहना आपको अजीब सा लग रहा हो, क्योंकि यह ज़ेहनों मे यह बात बैठी हुई है कि यह तब्लीग़ी जमाअत, जो उम्मत की इस्लाह का काम कर रही है, पर ऐसा नहीं है। इस काम में लोगों का इज्तिमाई तौर पर शरीक न होना,

और इस काम का न करना इसकी बुनियादी वजह यह है कि उम्मत इस काम को फ़र्ज़े किफ़ाया समझती है। कि भलाई का हुक्म करना और बुराई से रोकना, बेशक अच्छा काम है, अगर उसे एक जमाअत कर ले तो बाक़ी की तरफ़ से ज़िम्मेदारी अदा हो जाती है। लेकिन ऐसा नहीं है, बल्कि दावत फ़र्ज़े ऐन है, फ़र्ज़े किफ़ाया नहीं है फ़र्ज़े किफ़ाया वह दावत होती है जो दूसरों के लिए की जाए। जैसे–

(1) जनाज़े की तकफ़ीन,

(2) इसकी तदफ़ीन,

(3) इसकी नमाज़

वह फ़र्ज़े किफ़ाया है कि मामला दूसरे का है। दूसरों की इस्लाह के लिए दावत देना भी फ़र्ज़े किफ़ाया है कि अगर कोई जमाअत ऐसी हो जो लोगों को भलाई का हुक्म करें और बुराई से रोके, तो यह फ़रीज़ा अदा हो जाएगा, यह मैं फ़र्ज़े किफ़ाया की बात कर रहा हूं। लेकिन यह काम फ़र्ज़े किफ़ाया नहीं है बल्कि फ़र्ज़े ऐन है क्योंकि दावत ख़ुद अपनी ज़ात के लिए है। हां दूसरों को भी इससे नफ़ा हो जाएगा, पर यहां हर एक की मेहनत ख़ुद उसकी अपनी ज़ात के लिए है।

﴿وَمَنْ جَاهَدَ فَإِنَّمَا يُجَاهِدُ لِنَفْسِهِ إِنَّ اللَّهَ لَغَنِيٌّ عَنِ الْعَٰلَمِينَ﴾

"और जो शख़्स मेहनत करता है वह अपने ही (नफ़े के) लिए मेहनत करता है (वरना) ख़ुदा तआला को (तो) तमाम जहान वालों में किसी की हाजत नहीं।

यक़ीन के बनने का रास्ता दावत ही है

कि हर एक की दीन की मेहनत ख़ुद उसकी अपनी ज़ात के लिए पहले है। कि ईमान का सीखना फ़र्ज़े किफ़ाया नहीं है बल्कि ईमान का सीखना फ़र्ज़े ऐन है, जब ईमान का सीखना फ़र्ज़े ऐन है तो इसकी दावत देना फ़र्ज़े ऐन है। हज़रत रह० फ़रमाते थे कि यक़ीन के बनने का रास्ता, दावत ही है, इसके अलावा यक़ीन के बनने का कोई रास्ता नहीं है। यह मैं (मौलाना सअ़द साहब) हज़रत की बातें (अमानत) अर्ज़ कर रहा हूं, क्योंकि मेरे दोस्तों अज़ीज़ो! हाए! हाए! हाए! अब हमारे मज्मे का हाल यह है कि वह सुन सुनकर मौलाना युसूफ़ रह० के बयानात को नहीं पढ़ता, इसी तरह हयातुस्सहाबा के पढ़ने का भी कोई जज़्बा और शौक़ इसके

अंदर नहीं है, कि आख़िर मौलाना इलयास साहब रह० और मौलाना युसूफ़ साहब रह० अपने मज्मे से क्या चाहते थे? यह हज़रात अपने मज्मे को किस बुनियाद पर उठाना चाहते थे। अब हमारे मज्मे का हाल यह है कि वे हर क़िस्म की किताबों का मुताला (पढ़ते हैं) करते हैं, जिससे उसका ज़ेहन और उनकी फ़िक्रें उनकी सोच, वह हज़रत मौलाना इलयास रह० और हज़रत मौलाना युसूफ़ साहब रह० की सोच से अलग हुई जा रही हैं। मैं तो सोचता हूं कि सिवाए मसाइल की किताबों के कि वे तो ज़रूर पढ़ा करो लेकिन बाक़ी इन हज़रात के बयानात का पढ़ना भी निहायत ज़रूरी है। ताकि हमें अंदाज़ा हो कि यह हज़रात इस मेहनत को किस बुनियाद पर पेश कर रहे थे, कि आख़िर दावत है कि किस लिए? कि दावत अपनी ज़ात के लिए असल है। हज़रत रह० फ़रमाते थे कि *"जिस चीज़ को तुम अपने अंदर पैदा करना चाहो, उसको बे–सिफ़त तब्लीग करो"* कि अपने अंदर उतारने की ग़रज़ से दूसरों को दावत दो, तो यह अल्लाह का ज़ाब्ता (क़ानून) है, इसका वायदा है कि जो हमारे वास्ते मेहनत करेंगे हम दूसरों से पहले इनको नवाज़ देंगे कि जो हमारे बंदों को हमारी तरफ़ बुलाएंगे हम उनसे पहले उन्हें नवाज़ेंगे।

﴿وَالَّذِينَ جَاهَدُوا فِينَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا وَإِنَّ اللَّهَ لَمَعَ الْمُحْسِنِينَ﴾ [العنكبوت-٦٩]

"और जो लोग हमारी राह में मुशक़्क़तें बर्दाश्त करते हैं, हम उनको अपने (क़ुर्ब व सवाब यानी जन्नत के) रास्ते ज़रूर दिखा देंगे और बेशक अल्लाह तआला (की रज़ा और रहमत) ऐसे ख़ुलूस वालों के साथ है।"

इसलिए मेरे दोस्तों बुज़ुर्गो! ईमान का सीखना फ़र्ज़ ऐन है, और इतना ईमान सीखना फ़र्ज़ ऐन है, जो मोमिन को हराम से रोक दे, यह दावत की पहली चीज़ है। ईमान की दावत तमाम नबियों को मुशतरक (एक जैसी) दी गई हैं, शरीअत तो अलग अलग हैं कि किसी नबी की इबादत का कोई तरीक़ा है और किसी का कोई तरीक़ा है। लेकिन दावत सारे नबियों की मुशतरक (एक जैसी) है।

﴿وَمَا أَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ مِنْ رَسُولٍ﴾ [الانبياء ٢٥]

"और हमने आपसे पहले कोई ऐसा पैग़म्बर नहीं भेजा जिसके पास हमने यह वही न भेजी हो"

"ईमान की दावत" खुद मोमिन की लिए है

ये सारे नबियों की मुशतरक (एक जैसी) दावत है, मैलाना इलयास साहब रह० फरमाते थे कि अगर मैं इस काम का कोई नाम रखता तो इस काम का नाम *"तहरीके ईमान"* रखता। कि ईमान का सीखना फ़र्ज़ ऐन है चूंकि उम्मत के अंदर से ईमान के सीखने का रिवाज ख़त्म हो गया तो मुसलमानों के अंदर यह बात आ गई कि ईमान की दावत तो ग़ैरों के लिए है कि हम तो ईमान वाले हैं, हम को ईमान की दावत की ज़रूरत नहीं है। अब यह सोच हो गई है, हालांकि ईमान की दावत ख़ुद मोमिन के लिए है, अल्लाह का हुक्म भी है कि–

﴿يَاأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا آمِنُوا﴾

कि ईमान वालो! तुम ईमान लाओ, अल्लाह हुक्म दे रहे हैं, ईमान वालों को ईमान लाने का। उलमा ने इसकी तफ़सीर की है। कि ईमान वालो! मुसलमान बनकर रहो। इसलिए ईमान की दावत खुद मोमिन के लिए है, एक ख़्याल यह पैदा हो गया है, इस जमाने में कि दावत तो ग़ैरों के लिए है, हम तो है ही ईमान वाले है, हमें दावत की ज़रूरत नहीं है। हालांकि आप अंदाजा करें तो सहाबा किराम रज़ि० जिनका ईमान इनके दिलों में पहाड़ों की तरह जमा हुआ था, उनको हुक्म है कि अपने ईमान की तज्दीद करते रहा करो, वरना पुराने कपड़े की तरह पुराना हो जाएगा। सहाबा जो–

> वही (हज़रत जिब्रील अलै० का हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास अल्लाह का पैग़ाम लाना) भी उतरती हुई देख रहे हैं।
> फ़रिश्तों का नज़ूल (आना–जाना) भी देख रहे हैं।
> ग़ैबी मदद भी देख रहे हैं।
> अल्लाह के वायदे भी पूरे हो रहे हैं।
> इनके ईमान में तरक्क़ी भी हो रही है।

मेरे दोस्तो! सहाबा के सामने जितने भी ईमान को बढ़ाने के मनाज़िर (बहुत ज़्यादा बातें और चीज़ें) थे, हमारे सामने इनमें से कोई भी मनाज़िर नहीं हैं।

और सहाबा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु अजमईन–

> जो ग़ैबी मदद भी देख रहे हैं,

फ़रिश्तों का नज़ूल भी देख रहे हैं,
चीज़ों में बरकतें भी देख रहे हैं,

फिर इनको यह हुक्म दिया जा रहा है कि अपने ईमान की तज्दीद करते रहो, क्योंकि ईमान इस तरह पुराना हो जाता है, जिस तरह कपड़ा पुराना हो जाता है। इस बात पर बहुत ज़्यादा ग़ौर करना पड़ेगा, कि आज मुसलमानों का यह कहना है कि हमें क्या जरूरत है ईमान की दावत की या हमें क्या ज़रूरत है ईमान की तज्दीद करने की, तो यह बात कहना आसान नहीं है, तो मैंने अर्ज़ किया कि वे सहाबा रज़ि०, जिनका ईमान उम्मत के लिए नमूना है—

﴿آمِنُوْا كَمَا آمَنَ النَّاسُ﴾ [بقرہ-۱۳]

"कि ईमान सीखो सहाबा की तरह"

सहाबा का ईमान नमूना है, उन्हें हुक्म है अपने ईमान की तज्दीद करने का कि अपने ईमान को नया किया करो।

सहाबा रज़ि० ने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पूछा भी कि या रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम! हम अपने ईमान को कैसे नया करें? आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि—'ला इलाह इल्लल्लाहु' "لا إله إلا الله" की कसरत से अपने ईमान को नया किया करो।

जो अल्लाह के ग़ैर से उम्मीद रखेगा अल्लाह उसे ग़ैर के हवाले कर देंगे

अब सवाल यह पैदा होता है कि क्या मतलब है कलिमे की कसरत का?

कसरत का मतलब सिर्फ़ इसका ज़िक्र नहीं है, बल्कि कलिमे की कसरत से ईमान नया होने का मतलब यह है कि जिस तरह ब-कसरत दुनिया में अल्लाह के ग़ैर से होने को बोला जाता है, तुम ब-कसरत अल्लाह की ज़ात से होने को बोलो, यह है कलिमे की कसरत से ईमान के नया होने का मतलब।

मैं तो यह सोचता हूं कि पांच मिनट तो यह तस्बीह लेकर कलिमे का ज़िक्र करता है और सुबह से लेकर शाम तक इसकी ज़बान पर—

हुकूमत ये करेगी,
ताजिर ये करेंगे,

वज़ीर ये करेंगे,

सदर ये करेंगे,

फ़्लां मुल्क ये करेगा, फ़्लां मुल्क ये करेगा,

उसने फ़्लां हथियार बनाया हुआ है, वह ये करेगा,

कि सारा दिन शिर्क को बोला करते हैं, अख़बार को आंखें फाड़ फाड़कर पढ़ते हैं और हैरत से दूसरों को सुनाते हैं, क्योंकि कुरआन की ख़बरों का यक़ीन है नहीं, और अख़बारों की ख़बरों का यक़ीन है, इसलिए उसे पढ़कर सुनाते हैं। अल्लाह तो इंसानों के दिलों का हाल देखते हैं, अल्लाह तआला का निज़ाम यह है और इनका ज़ाब्ता (क़ानून) यह है कि जो हमारे ग़ैर से मुतास्सिर होते हैं, हम उन पर अपने ग़ैरों को मुसल्लत ज़रूर करते हैं। मुसलमान के अल्लाह के ग़ैर के मुतास्सिर होने की सज़ा में इन पर ग़ैरों का क़ब्ज़ा है। हां, यह मैं अपको हदीस की बातें अर्ज़ कर रहा हूं, रिवायत में है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: कि जो अल्लाह के ग़ैर से उम्मीद रखेगा अल्लाह उसे ग़ैर की हवाले कर देंगे।

तो कलिमा 'ला इलाह इल्लल्लाहु' की कसरत तो ईमान की ताज़गी का मतलब क्या है?

इस पर ग़ौर करना पढ़ेगा सिर्फ़ इससे कलिमा 'ला इलाह इल्लल्लाहु' का ज़िक्र मुराद नहीं है, बेशक! इसमें ख़ुदा की क़सम! कि ज़िक्र के फ़ज़ाइल, इसके अनवारात इसकी बरकात, इसके फ़ायदे अपनी जगह पर मुसल्लम हैं, कि बंदा अपनी ज़बान से कलिमे की अलफ़ाज़ कहे, तो—

इसके क्या फ़ज़ाइल हैं,

इसके क्या अनवारात हैं,

इसके क्या बरकात हैं,

इस पर क्या वायदें हैं,

ये सब अपनी जगह पर मुसल्लम हैं, लेकिन अल्लाह के ग़ैर का असर दिलों से निकलने और अल्लाह की ज़ात और उसकी कुदरत, उसकी अज़मत, उसकी बड़ाई को दिल में बढ़ाने के लिए, यह ज़रूरी है कि जहां कलिमे का ज़िक्र करो, वहां इस कलिमे का मतलब और इसके मफ़हूम की दावत भी दो। क्योंकि हदीस में आता है

कि तुम कलिमा 'ला इलाह इल्लल्लाह' का इतना ज़िक्र करो, कि लोग पागल कहें। मैंने इस हदीस पर गौर किया कि ज़िक्र करने वालों को पागल कहलाए जाने का क्या मतलब है? तो समझ में यह आया कि नबियों को इसलिए पागल कहा जाता था कि नबी इस कलिमे को क़ौम के अक़ीदे और क़ौम के यक़ीनों के खिलाफ़ कहते थे। इसलिए क़ौम उन्हें पागल कहती थी।

क़ौमे शुऐब का यह ख़्याल था कि तिजारत से होता है।

क़ौमें सबा का गुमान था कि खेती–बाड़ी से होता है।

क़ौमे सालेह का यक़ीन यह था कि कारखानों से होता है।

फ़िरऔन का ख़्याल था कि बादशाहत से होता है।

नमरूद का ख़्याल था कि माल से होता है।

पर नबी इन सारे कलिमों के ख़िलाफ़ अपना कलिमा 'ला इलाह इल्लल्लाह' लेकर आए तो उन सब ने नबियों को पागल कहा, कि कोई नबी ऐसा नहीं है जिसको क़ौम ने पागल न कहा हो। आप हज़रात को बात समझ में आ रही है? क्यों भाई! देखो! मैं यह तक़रीर नहीं कर रहा हूं।

ईमान को नया करो

मैं तो यह सोचता हूं कि आखिर मेरा मज्मा रोज़ाना अल्लाह की तौहीद को, इसकी क़ुदरत को बोलने की ज़रूरत क्यों नहीं महसूस कर रहा है? मुझे तो इसकी उलझन है कि यह उसे बोलने की ज़रूरत महसूस नहीं कर रहा है? असल में हमें यह नहीं मालूम कि सहाबा किराम रज़ि० को ईमान की तज्दीद का जो हुक्म दिया गया तो उसके लिए सहाबा किराम क्या करते थे? ये हमें मालूम नहीं है।

इमाम बुख़ारी ने तो ईमान की तक्वीयत (मज़बूती) के बाब में जो तर्जुमा अल–बाब बांधा है, ईमान की तक्वीयत (मज़बूती) के लिए जो बाब तय किया गया है। इसमें खुद इमाम बुख़ारी ने हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ि० का वाक़िआ नक़ल किया है कि मुआज़ बिन जबल रज़ि० लोगों को मस्जिद में लाकर उन्हें तौहीद सुनाते, गैब के तज़्किरे करते और लोगों से कहते कि आओ आओ थोड़ी देर बैठो ईमान सीख लें। मगर हम तो दावत से इतने दूर हो चुके हैं कि वह काम जो सहाबा रज़ि० ने किया है, इस पर हमें अश्काल (शक) होने लगा है। खूब गौर करो! कि

कहां सहाबा के ईमान कि हज़रत उस्मान रज़ि० के ईमान को किसी एक लश्कर पर बांट दिया जाए, तो उसके लिए इतना–इतना काफ़ी हो, जितना–जितना ईमान होना चाहिए। एक मर्तबा हज़रत उस्मान रज़ि० के पास से हज़रत उमर रज़ि० का गुज़र हुआ तो उनके साथ बैठे हुए लोगों से हज़रत उमर रज़ि० ने फ़रमाया, कि तुम्हारी मज्लिस में यह जो उस्मान रज़ि० जो बैठे हैं ना, यह वह शख़्स, कि उनके ईमान को एक बड़े लश्कर पर बांट दिया जाए, तो यह ईमान सब के लिए काफ़ी हो जाए। ऐसा ईमान सहाबा रज़ि० का, फिर उनको हुक्म यह कि अपने ईमान को नया करो।

मुझे तुमसे यह कहना था मेरे अज़ीज़ों और दोस्तो! कि हमारा रोज़ाना का काम यह है कि हम मस्जिदों में ईमान के हल्क़े क़ायम करें, यह मस्जिद को आबाद करने का पहला अमल है, यह सहाबा रज़ि० की सुन्नत है!

मस्जिद में ईमान का हल्क़ा

कि आओ भाई बैठो थोड़ी देर थोड़ी देर ईमान सीख लें। हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ि०, हज़रत अब्दुर्रहमान बिन रवाहा रज़ि० वग़ैरह बड़े जलीलुल क़द्र सहाबी हैं। पर उनका रोज़ाना का मामूल था कि लोगों को लेकर मस्जिद में ईमान का हल्क़ा क़ायम करते थे। अब दावत और ईमान उम्मत में ख़त्म हो गई, कि ईमान की मज़बूती के अस्बाब ख़त्म हो गए तो उसका सारा असर पड़ा दीन पर। क्योंकि इस्लाम ईमान के ब–क़द्र होगा कि जितना ईमान उतना इस्लाम, अल्लाह की इताअत ईमान की ब–क़द्र होगी। इसलिए हदीस में फ़रमाया है कि मोमिन अल्लाह की इताअत में नकेल पड़ी ऊंट की तरह हैं। मुसलमानों का यह सोचना कि हम तो हैं ही ईमान वाले, हमें क्या ज़रूरत है ईमान को सीखने की? यह बड़ी ना–समझी की बात है। सुनो जितनी देर बदन से कुरता उतारने में लगता हैं ना, इससे कम देर में ईमान दिलों से निकल जाता है। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: जब किसी मुसलमान से कबीरा गुनाह हो जाता है तो ईमान के अनवार इसके दिल से निकलकर उसके सर पर साया कर लेता हैं। फिर जब तक वह तौबा नहीं करता, ईमान का नूर वापस नहीं आता। हमें तो कबीरा गुनाह की भी ख़बर नहीं कि कबीरा गुनाह क्या क्या हैं।

अहकामात (हुक्मों) का इल्म अमल के लिए है

इसलिए मेरे दोस्तों अज़ीज़ो और बुज़ुर्गो! पहला काम हमारा यह है कि कलिमा 'ला इलाह इल्लल्लाहु' को दावत में लाओ. इसको दावत में लाने का सबसे पहला काम यह है कि रोज़ाना–

अल्लाह की तौहीद को,
उसकी क़ुदरत को,
उसके रब होने को,
उसकी अज़मत को और

उसके ग़ैर से कुछ नहीं हो रहा, उसको बोला करो। हमारे मश्क़ का यह बुनियादी मक़सद, उलमा ने लिखा है अहकामात (हुक्मों) का इल्म अमल के लिए है, इससे अमल सीखना मक़सूद है, कि उससे तो फ़रागत हो जाएगी। कि

नमाज़ का इल्म हासिल हो गया, तो नमाज़ के इल्म से फ़रागत हो गई कि नमाज़ ऐसी पढ़ी जाएगी।

ज़कात का इल्म हासिल हो गया, तो ज़कात के इल्म से फ़रागत हो गई कि ज़कात ऐसे दी जाएगी।

हज का इल्म हासिल हो गया, तो हज के इल्म से फ़रागत हो गई कि हज इस तरह किया जाएगा।

रोज़े का इल्म हासिल हो गया, तो रोज़े के इल्म से फ़रागत हो गई कि रोज़ा ऐसे रखा जाएगा।

सारी नेकियों का मिदार तौहीद पर है

उलमा ने लिखा है कि अहकामात (हुक्मों) का इल्म अमल के लिए है तो अमल के लिए इल्म से फ़रागत हो जाएगी, लेकिन मोमिन को अल्लाह की तौहीद से फ़रागत नहीं है कि इतना कहना काफ़ी नहीं है कि हम जानते हैं कि अल्लाह एक है, बल्कि रोज़ाना अल्लाह की तौहीद को बयान करो, उसका हुक्म है।

"يَاأَيُّهَا النَّاسُ! وَحِّدُوا اللهَ فَإِنَّ التَّوْحِيدَ رَأْسُ الطَّاعَاتِ"

कि अल्लाह की तौहीद को बोला करो क्योंकि सारी नेकियों का मिदार तौहीद

पर है। कि—

आमाल में इख़्लास (जो भी अमल हो अल्लाह के लिए हो),

आमाल में इस्तिक़ामत (जमना),

आमाल पर वायदों का पूरा होना,

आमाल पर इजरा (अज्र यानी सवाब) का मिलना,

हर आमाल के साथ ये चार बुनियादी चीज़ें हैं, ये चारों ईमान के बग़ैर हासिल नहीं होती।

वायदे यक़ीन से पूरे होंगे।

इस्तिक़ामत (जमे रहना) यक़ीन से होगी।

अज्र भी यक़ीन से मिलेगा।

इख़्लास भी ईमान के ब–क़द्र होगा।

ईमान की तक़्वीयत (मज़बूती) के चार अस्बाब

इसलिए ईमान की तक़्वीयत (मज़बूती) का पहला सबब यह है कि अल्लाह की तौहीद को रोज़ाना बोला करो, कि करने वाली ज़ात सिर्फ़ अल्लाह की है, अल्लाह के ग़ैर से तो कुछ होता ही नहीं। कि क़ुदरत कहां है? क़ुदरत कायनात में नहीं, क़ुदरत तो अल्लाह की ज़ात में है, कि जिब्रील अलै० में या नबियों में या वलियों में इन किसी में क़ुदरत नहीं है।

तो वह जब इंसान के अल्लाह के ग़ैर में क़ुदरत तसव्वुर करता है तो ख़्याल ही उसे अल्लाह के ग़ैर की तरफ़ ले जाता है।

वज़ीर से यह हो जाएगा,

सदर से यह हो जाएगा,

अब मैं आपको कैसे समझाऊं, मैं तो हज़रत रह० की बातें बता रहा हूं, हज़रत रह० फ़रमाते थे कि उनका अपना यक़ीन अपने आमाल से हटकर दूसरों के अमल पर जाएगा, वह यूं कहेगा कि फ़लां बुज़ुर्ग से यह हो जाएगा। यह होंगे वह, जो अपने अमल से फ़ारिग़ हो जाएंगे, अपनी हाजतों (ज़रूरतों) को अमल करने वालों के हवाले कर देंगे।

हालांकि करने वाली ज़ात सिर्फ़ अल्लाह तआला की है, अल्लाह के ग़ैर से कुछ

नहीं होता अगर नबी भी यह कहें कि यह कल करूंगा और इनशाअल्लाह कहना भूल जाएं. ऐसा नहीं है कि नऊजुबिल्लाह आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जान–बूझकर ऐसा किया हो. कि जब आपसे पूछा गया कि अस्हाबे कहफ़ कौन थे तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह मैं कल बता दूंगा. बल्कि आपकी बात फ़रमाते हुए इनशाअल्लाह कहना भूल गए।

﴿وَلَا تَقُولَنَّ لِشَيْءٍ إِنِّي فَاعِلٌ ذَٰلِكَ غَدًا إِلَّا أَن يَشَاءَ اللَّهُ وَاذْكُر رَّبَّكَ إِذَا نَسِيتَ وَقُلْ عَسَىٰ أَن يَهْدِيَنِ رَبِّي لِأَقْرَبَ مِنْ هَٰذَا رَشَدًا﴾ [کہف ۲۳-۲۴]

"और आप किसी काम की निस्बत यूं न कहा कीजिए कि मैं इसको कल कर दूंगा, मगर खुदा के चाहने को मिला दिया कीजिए, और जब आप भूल जाएं, तो अपने रब का ज़िक्र कीजिए और कह दीजिए कि मुझको उम्मीद है कि मेरा रब मुझको (नुबुव्वत की) दलील बनने के एतबार से इससे भी नज़दीक तर बात बतला दे।"

हम तो गौर करें कि सुबह से शाम तक हमारी ज़ुबान पर कितने दावे आते हैं कि–

हम ये करेंगे,
हुकूमत ये करेगी,
ताजिर ये करेंगे,
डाक्टर ये करेंगे,

पर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक मर्तबा फ़रमाया कि मैं कल बताऊंगा कि अस्हाबे कहफ़ कौन थे? और आप इनशाअल्लाह कहना भूल गए, तो उलमा ने लिखा है कि पंद्रह दिन तक वही नहीं आई, इतना लम्बा वक़्फ़ा (वक़्त) वही के बंद होने का कभी नहीं हुआ। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ताने कसे जाने लगे कि कहां हैं मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) जो कहते थे कि आसमान से वही आती थी? कहां वह जिब्रील जो आसमान से वही लेकर आते थे? क्यों नहीं बोलते कि आप के पास गैब की खबर आती है। आप वही के बंद हो जाने से बहुत परेशान हो गए, सिर्फ़ बात इतनी थी कि मैं कल बताऊंगा कि अस्हाबे कहफ़ कौन थे? यह नहीं कहा कि अल्लाह चाहेंगे तो कल बताऊंगा। आप (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को इस पर तंबीह हुई कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम ने क्यों कहा कि कल बताऊंगा। फिर पंद्रह दिन के बाद वही आई कि—

﴿وَلَا تَقُولَنَّ لِشَيْءٍ إِنِّي فَاعِلٌ ذَٰلِكَ غَدًا إِلَّا أَنْ يَشَاءَ اللَّهُ وَاذْكُرْ رَبَّكَ إِذَا نَسِيتَ وَقُلْ عَسَىٰ أَنْ يَهْدِيَنِ رَبِّي لِأَقْرَبَ مِنْ هَٰذَا رَشَدًا﴾ [کہف ۲۳-۲۴]

"और आप किसी काम की निस्बत यूं न कहा कीजिए कि मैं इसको कल कर दूंगा, मगर खुदा के चाहने को मिला दिया कीजिए, और जब आप भूल जाएं, तो अपने रब का ज़िक्र कीजिए और कह दीजिए कि मुझको उम्मीद है कि मेरा रब मुझको (नुबूव्वत की) दलील बनने के एतबार से इससे भी नज़दीक तर बात बतला दे।"

नबी जी! आइन्दा कभी यह न कहिएगा कि यह काम मैं कल कर दूंगा कि जब तक आप अपने कहने को हमारी ज़ात पर मौक़ूफ़ न करें कि जब भी आप इनशाअल्लाह कहना भूल जाया करें तो इनशाअल्लाह ज़रूर कह लिया करें।

मैं बता रहा था कि मेरे दोस्तो! कि क़ुदरत अल्लाह की ज़ात में है, औलिया, अंबिया, फ़रिश्ते, जिब्रील सब के सब मुहताज हैं, नबी भी जिस काम के लिए भेजे गए हैं ना, इसमें भी वे मुहताज हैं, मुख़्तार नहीं हैं कि किसी को वह हिदायत दें दें। कि नबियों को हिदायत के लिए भेजा गया है, लेकिन वह खुद किसी को हिदायत नहीं दे सकते। आप सल्ल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सारा ज़ोर लगा दिया अपने चचा अबू तालिब पर कि उनको हिदायत मिल जाए और दूसरे चचा हज़रत हमज़ा के क़ातिल वहशी को कोई क़त्ल कर दे, पर अल्लाह वहशी को हिदायत दे रहे हैं और अबू तालिब बग़ैर हिदायत दुनिया से जा रहे हैं।

हज़रत रह० फ़रमाते थे कि अंबिया और इंसान अपने इरादे में नाकाम किए जाते हैं, अल्लाह को पहचानने के लिए। हज़रत अली रज़ि० फ़रमाते थे कि मैंने अपने इरादे में नाकाम होकर ही अल्लाह को पहचाना है। जो लोग अस्बाब का यक़ीन रखते हैं ना, वे नाकामी में अस्बाब की कमी तालाश करते हैं और जो अल्लाह पर यक़ीन रखते हैं, वह अपनी नाकामियों में अल्लाह को पहचानते हैं कि चलो अल्लाह की तरफ़, इसलिए कि काम अल्लाह ने बिगाड़ा है, कि उनको अस्बाब की नाकमी अल्लाह की तरफ़ ले जाती है और जिनका यक़ीन अस्बाब की तरफ़ होता है कि वह तो बेचारे खुद—कुशी कर बैठे कि सारे अस्बाब होते हुए भी काम नहीं हुआ।

क़ुदरत अल्लाह की ज़ात में है कायनात में क़ुदरत नहीं है

इसलिए मेरे अज़ीज़ों दोस्तों और बुज़ुर्गों! क़ुदरत अल्लाह की ज़ात में है, कायनात में क़ुदरत नहीं है। कायनात तो क़ुदरत से बनकर क़ुदरत के ताबेअ है, यह जितनी ज़मीन और आसमान के बीच ख़ला में जो चीज़ें हैं, ये सब अल्लाह की पहचान के लिए हैं, कि अल्लाह ने ज़ाहिरी निज़ाम को बनाया बंदे के इम्तिहान के लिए कि देखना यह है कि निज़ामे आलम की तब्दीलियां तुम्हें हमारी तरफ़ लाती हैं या तुम्हें हमारे ग़ैर की तरफ़ ले जाती हैं।

अब क्या बताऊं मैं आपको, हाए! इस ज़माने में मुसलमान चलता है साइंस वालों को देखकर, कि साइंस क्या कह रही है। सबसे बड़ा शिर्क जो मुसलमान के लिए है वह साइंस का निज़ाम है, इसका आख़िर होगा दज्जाल पर।

अल्लाह के ग़ैर से दुनिया में कोई तब्दीली होना यह साइंस का खुलासा है। साइंस में पढ़ाया ही यह जाता है कि इसकी वजह से यह हुआ और इसकी वजह से यह, ख़ुदा की क़सम! साइंस में अल्लाह के ग़ैर से होना ही पढ़ाया जाता है। ये बेचारे नहीं जानते कि–

अल्लाह कौन है?

इस कायनात का निज़ाम क्या है?

ख़िला का निज़ाम कैसे चल रहा है?

इसकी ख़बर ही नहीं, इन्होंने तो कायनात के निज़ाम से जोड़ा है, यही साइंस का खुलासा है और यह सबसे बड़ा शिर्क है।

कायनात के निज़ाम को कायनात से जोड़ना शिर्क है

कायनात के निज़ाम को कायनात से जोड़ना, इसको शिर्क कहते हैं। और कायनात के निज़ाम को ख़ालिके कायनात से जोड़ना, इसको ईमान कहते हैं।

यह बात मेरी याद रखना! कि कायनात के निज़ाम को कायनात से जोड़ना इसको शिर्क कहते हैं और कायनात के निज़ाम को ख़ालिके कायनात से जोड़ना इसको ईमान कहते हैं। मैं कैसे अर्ज़ करूं!!! कि हमें रहम नहीं आता अपने छोटे छोटे बच्चों पर कि सारी कुव्वत हम लगा देते हैं कि उन्हें अल्लाह के ग़ैर को सिखलाने पर, शिर्कीयत सीखलाने पर, अब जब पूछोगे इन बच्चों से कि बारिश कब

होती है, तो वह साइंस में पढ़ा हुआ सबक़ बतलाएंगे कि बारिश ऐसे होती है।

हाए!!! मैं क्या अर्ज़ करूं।

हमारा मज्मा कहां जा रहा है?

हम कहां जा रहे हैं?

अगर रोज़ाना तौहीद को नहीं बोलेंगे, तो शिर्क ऐसी जड़ पकड़ लेगा कि तुम समझोगे कि हम तब्लीग़ का काम कर रहे हैं और अंदर शिर्क का माद्दा पैदा हो रहा होगा। इसलिए अल्लाह के ग़ैर से नहीं हो रहा, इसके बोलने की आदत डालो! क्योंकि अल्लाह से होने को तो ग़ैर भी बोल रहे हैं कि ऊपर वाला करता है, ऊपर वाला करेगा और ऊपर वाले ने किया। सिर्फ़ इसे बोलने को तौहीद नहीं कहते, बल्कि अल्लाह के ग़ैर से नहीं हो रहा, इसे बोलना तौहीद कहते हैं, यह नबियों की दावत है। कि अल्लाह के ग़ैर से तो कुछ हो ही नहीं रहा, करने वाली ज़ात सिर्फ़ अल्लाह की है। हमें तो रोज़ाना इसकी चोट मारनी पड़ेगी अपने दिल पर, तब कहीं जाकर इसकी हक़ीक़त खुलेगी वरना सबके दिलों पर चोर बैठा हुआ है, जितना यह कायनात से मुतास्सिर होंगे, उतना ही इन नक़्शों में चलने वाले ग़ैरों से मुतास्सिर होंगे।

सहाबी के लिए जेल की कोठरी में बादल का टुकड़ा आकर बरसा

अब कौन सिखलाए ऐसे लोगों को, कि बादल का टुकड़ा सहाबी के लिए जेल की कोठरी में आकर बरसा। कि हज़रत हुज्र बिन अदी रज़ियल्लाहु अन्हु को एक बार ग़ुस्ल की हाजत हुई, उस वक़्त वह एक कोठरी में क़ैद थे। जो आदमी उनकी निगरानी में लगाया गया था, उससे उन्होंने ग़ुस्ल के लिए पानी मांगा, तो उसने पानी देने से इंकार कर दिया, फिर इन्होंने आसमान की तरफ़ देखकर अल्लाह से पानी मांगा, उसी वक़्त एक बादल आया और कोठरी के अंदर घुसकर बरसने लगा, उन्होंने उससे ग़ुस्ल किया और ज़रूरत भर का पानी भी पी लिया।

कौन साइंस वाला इसको क़बूल करेगा? तो यूं कहते हैं कि बादल वहां से उठता है इतनी बुलंदी पर जाता है वहां से बरसता है। इनका सारा निज़ाम साइंस का है, यह तो अल्लाह को जानते ही नहीं हैं बे-चारे, यह तो समझते हैं कि

अल्लाह दुनिया बनाकर फ़ारिग़ हो चुके हैं, अब दुनिया का निज़ाम ख़ुद चल रहा है। ख़ुदा की क़सम! यही दहरियत (अल्लाह को न मानना) है, दहरियत (अल्लाह को न मानना) इसी का नाम है कि जो कुछ कायनात में हो रहा है, ख़ुद–ब–ख़ुद हो रहा है, अपने बच्चे को भी यही पढ़ा रहे हैं और ख़ुद भी यही पढ़ रहे हैं।

बाज़ की सुबह ईमान के साथ बाज़ की सुबह कुफ़्र के साथ

हुज़ूर अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसलिए यह बात पहले ही साफ़ कर दी कि सुलहे हुदैबिया की रात बारिश हुई, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पहले ही सहाबा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से फ़रमाया: कि सुन लो जब सुबह को सोकर उठोगे तो तुम में से बाज़ मोमिन होंगे और बाज़ काफ़िर होंगे। यह बात सुनकर सहाबा दहल (डर) गए कि यह बात कोई मामूली बात नहीं थी। इसीलिए कि वह लोग कुफ़्र से ही निकल कर ईमान में आए फिर आख़िर सुबह कैसे काफ़िर हो जाएंगे? तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा रज़ि० से फ़रमाया: कि जब सब सोकर उठोगे तो तुममें से बाज़ काफ़िर होंगे और बाज़ मोमिन। तो सहाबा रज़ि० ने कहा या रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम! ऐसे कैसे हो जाएगा? तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: जो सुबह उठकर यह कहेगा कि फ़लां सितारे की वजह से बारिश हुई है तो वह अल्लाह का इंकार करने वाला है और सितारों पर ईमान रखने वाला है और जो यूं कहेगा कि बारिश अल्लाह के करने से हुई है वह अल्लाह पर ईमान रखने वाला है। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने सहाबा को इस तरह ईमान सिखलाया है, यह बात जो सहाबा कहते हैं कि हमने सबसे पहले ईमान सीखा तो इस तरह आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने सहाबा को ईमान सिखलाया है।

ख़ूब ग़ौर करो बात पर यह जितना ख़िला का निज़ाम है, यह तो मेरे दोस्तों सिर्फ़ इम्तिहान के लिए बनाया गया है, कि हम देखें तुम इस निज़ाम को देखकर क्या फ़ैसला करते हो, जिनके और अल्लाह के दर्मियान कायनात का निज़ाम हाइल हो जाएगा, न वह किसी को माबूद समझ बैठेंगे। इसको माबूद समझने का क्या मतलब है? कि कायनात के निज़ाम को वह माबूद इस तरह समझेंगे कि करने वाली

ज़ात तो सिर्फ़ अल्लाह ही की है, मगर करने के लिए अल्लाह ने ये चीज़ों और शक्लों वाला रास्ता बनाया है। बस समझ लो उन्होंने इतना कहते ही अल्लाह का इंकार कर दिया। क्योंकि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त किसी निज़ाम के पाबंद नहीं हैं। जैसे साइंस वाले कहते हैं कि जब यूं होगा तो यह होगा।

ज़लज़ले (भूकंप) ज़ीना की वजह से आते हैं

जब ज़लज़ले आते हैं ना, ज़लज़ले। तो लोग साइंस वालों से पूछते हैं कि ज़लज़ला क्यों आया? कि सौ साल से तो कभी ज़लज़ला नहीं आया अब यहां ज़लज़ला क्यों आया? तो वे तुम्हें लाखों पट्टियां पढ़ाएंगे। अगर तुम यह सोचो कि अल्लाह ने ज़मीन हिलाई है और अल्लाह तआला तब ही ज़मीन हिलाकर ज़लज़ले लाते हैं, जब इनकी ज़मीन पर ज़ीना किया जाता है। हां, ज़ीना होने की वजह से ज़लज़ले आते हैं, कि ज़मीन ज़ीना को बर्दाश्त नहीं कर सकती है कि मैं भी अल्लाह की मख़्लूक़ और तू भी अल्लाह की मख़्लूक़, मैं भी मामूर हूं और तू भी मामूर है, तो तूने अल्लाह का हुक्म क्यों तोड़ा? पर लोगों को अंदाज़ा नहीं है, क्योंकि जिन्होंने ख़िला के निज़ाम को कायनात से जोड़ा हुआ है उन्हें तो कभी इसका ख़्याल भी नहीं आएगा कि ज़लज़ले का ताल्लुक़ ज़ीना से है। वह तो साइंस वालों ने उन्हें पढ़ा दिया है, वही पढ़ता है, इनकी इसी एतबार से सोच बनी हुई है कि हमने साइंस में यह पढ़ा था।

ख़ूब ध्यान से सुनो! हम सब के सब (अल्लाह हमें माफ़ फ़रमाए कि) ज़ाहिर परस्ती पर चल रहे हैं, हां सच्ची बात है यह कि हम बजाए ख़ुदा परस्ती के ज़ाहिर परस्ती पर चल रहे हैं। क्योंकि हम रोज़ाना अल्लाह की तौहीद को बोलने को काम नहीं समझते हैं, हम सब के ज़ेहनों में यह है कि तब्लीग़ के ज़रिए से कुछ आमाल हो जाते हैं, उन अमलों को करने की कोशिश है, फिर हिदायत तो अल्लाह के हाथ में है। जबकि मौलाना इलयास साहब रह० फ़रमाते थे कि अगर मैं इस काम का कोई नाम रखता तो इस काम का नाम *"तहरीके ईमान"* रखता। कि मुसलमानों के अंदर ईमान के सीखने का शौक पैदा किया जाए और हर मुसलमान अपने ईमान को लेकर फ़िक्रमंद हो जाए। अब ज़रा ख़ुद सोचो जो आदमी कायनात के निज़ाम से मुतासिर है, वह अहकामात (हुक्मों) पर कैसे चलेगा? ख़ूब समझ लो मैंने आपको

ईमान की तक्वीयत (मज़बूती) का पहला सबब अर्ज़ किया है कि अल्लाह की कुदरत को ख़ूब बोला करो। कि कुदरत अल्लाह की ज़ात में है, कायनात में कुदरत नहीं है। यह कायनात अल्लाह की कुदरत से बनी है और हर लम्हा कुदरत ही के ताबेअ है अल्लाह सूरज और चांद को सिर्फ़ इसलिए बे–नूर करते हैं कि वह बताना चाहते हैं कि उनकी रोशनी हमारे क़ब्ज़े में है जो यक़ीन नहीं करते वही सूरज के पूजारी हैं। क्योंकि ये लोग बे–चारे यह समझते हैं कि सूरज की रोशनी उसकी अपनी ज़ाती है।

इसलिए मेरे दोस्तों और अज़ीज़ो! हमारा रोज़ाना का पहला काम यह है देखो मैं बराबर बंगले वाली मस्जिद में अर्ज़ करता रहता हूं कि हमारे गश्तों का मक़्सद मुसलमानों से मुलाक़ातें कर करके उन्हें मस्जिद के माहौल में लाना है। कि उनसे मुलाक़ातें करके यह कहना कि भाई मस्जिद में ईमान का हल्क़ा चल रहा है आप भी तशरीफ़ ले चलें, चाहे आप 10 मिनट के लिए ही चलें। ख़ूब समझ लो कि हमारी मुलाक़ातों का मक़्सद मस्जिद में नक़द लाना है। कि सहाबा रज़ि० की पहली सुन्नत, मुलाक़ातें करके उन्हें ईमान की मज्लिस में बिठाओ, मस्जिद में बैठकर अल्लाह की कुदरत को, उसकी अज़मत को, उसके रब होने को, उसके एक होने को बैठकर सुनो और सुनाओ फिर यहां से इसी दावत को लेकर बाहर के तमाम कायनाती नक़्शों के ख़िलाफ़ सब निकलें कि सुनो करने वाली ज़ात सिर्फ़ अल्लाह की है, अल्लाह के ग़ैर से तो कुछ नहीं हो रहा है।

मस्जिद की आबादी की बुनियाद, मस्जिद में ईमान के हल्क़े का क़ायम होना है।

मैं तो अपने यहां निज़ामुद्दीन में सूबे वालों से यह पूछता हूं कि बताओ भाई! तुम्हारे यहां कितनी मस्जिदें मस्जिद नुबूवी की तर्तीब पर आबाद हैं? कि तुम्हारे यहां मस्जिद में ईमान का हल्का लगा हुआ और तुम्हारे साथी मुलाक़ातें करके मस्जिद के माहौल में ला रहे हों। देखो मस्जिद की आबादी की बुनियाद है कि मस्जिद में ईमान के हल्क़े क़ायम हो।

एक तरफ़ तालीम का हल्क़ा लगा हुआ हो,
एक तरफ़ ईमान का हल्क़ा हो,
और मुलाक़ातें कर करके लोगों को मस्जिद में लाया जा रहा हो।

पर किसी मस्जिद में ईमान का हल्क़ा क़ायम नहीं। अगर काम करने वालों ने रोज़ाना ईमान को न बोला, तो बाहर के माहौल का असर उनके दिलों पर पढ़कर रहेगा।

इसलिए रोज़ाना तौहीद को बोलना ज़रूरी समझो कि हमारे यक़ीन अल्लाह की ज़ात की तरफ़ फिरें, वरना अल्लाह के ग़ैर का असर दिलों पर पढ़ेगा और सारी बे–दीनी की बुनियाद अल्लाह के ग़ैर का असर है।

कैसे अर्ज़ करूं मैं कि मुसलमान शरीअत के एक एक हुक्म के बारे में बैठा सोच रहा है ना, कि अगर इस हुक्म के ख़िलाफ़ क़ानून आया तो क्या होगा? शरीअत के ख़िलाफ़ किसी क़ानून को ज़ेहन में सोचने की जगह देना भी उसके ईमान के ख़िलाफ़ है। शरीअत के किसी एक हुक्म के ख़िलाफ़ किसी क़ानून के सोचने को ज़ेहन में जगह देना भी ईमान के ख़िलाफ़ है। अच्छा जी! तो अब मुसलमान क्या करेगा? एहतियात करेगा, स्ट्राइक से, उनकी भूख–हड़ताल से, दीन के उस अमल की हिफ़ाज़त इसलिए नहीं होगी क्योंकि यह ख़ुद पूरे दीन पर नहीं है। क्योंकि ग़ैर तो मुसलमानों के दीन को जब ही मिटाते हैं, जब मुसलमान अपने दीन को ख़ुद बिगाड़ चुका होता है। ग़ैर तो बिगड़े हुए दीन को मिटाते हैं वरना किसी की क्या मजाल हैं कि दीन को मिटाए। हां, अगर मुसलमान ख़ुद इस्लाम के अरकान (हुक्मों) का पाबंद हो तो क्या मजाल है किसी कि कोई मुसलमान का इस्लाम के अरकान की तरफ़ नज़र भी उठाकर देख ले।

मेरे दोस्तो और अज़ीज़ो! उम्मत की दावत को छोड़ने ही की वजह है कि आज अज़ान तक पर मसाइल (रूकावटे) खड़े हो रहे हैं। यह दावत के छोड़ने की वजह से, ख़ूब ग़ौर से सुनो! वह तो जितना अल्लाह के ग़ैर का असर दिलों में होगा, उतना ही अल्लाह के ग़ैर का असर तसल्लुत होगा। मैं हज़रत रह० की बात अर्ज़ कर रहा हूं, कि हमारा रोज़ाना का काम यह है कि हम लोगों को मस्जिद में लाकर अल्लाह की क़ुदरत को समझाए, यह सहाबा रज़ि० की सुन्नत है अब दूसरा सबब ईमान की तक्वीयत (मज़बूती) का यह है कि अंबिया अलैहिस्सलाम के साथ जो ग़ैबी मदद हुई हैं, उनको बोला करो। क्योंकि अंबिया की ग़ैबी मदद को बोलना, यह ईमान की तक्वीयत (मज़बूती) का दूसरा सबब है।

"कि नबी जी (मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम)! हम आपके दिल को जमाने के लिए आप पर पिछले नबियों के वाक़िआत वहीं करते हैं" सूरः हूद, 120।

तो नबियों के गैबी मदद के वाक़िआत को बयान करना, दिलों के जमाव का सबब है, एक ईमान की तक़्वीयत (मज़बूती) का यह सबब है।

तीसरा सबब ईमान की तक़्वीयत का यह है कि जितना सहाबा किराम रज़ि० के साथ—

गैबी मदद,
बरकतें,
नुसरतें और
ज़ाहिर के ख़िलाफ़ जो मदद के वाक़िआत हुए हैं,

उन्हें ख़ूब बयान किया करो और बयान करने में कभी यह न सोचना कि ऐसा हो सकता है या नहीं? क्योंकि अंबिया और सहाबा के वाक़िआत अल्लाह की मदद के ज़ाब्ते बताने के लिए हैं। वरना लोग यह समझेंगे कि अल्लाह ने दुनिया को दारूल अस्बाब बनाया है, ताकि अल्लाह अस्बाब के ज़रिए हमारी मदद करते हैं।

अस्बाब पर निगाह रखकर अल्लाह से उम्मीद रखना, यह कुफ़्र का रास्ता है

देखो मेरे दोस्तो और अज़ीज़ो! यही वजह है कि हम सब अल्लाह के सामने अपने अस्बाब रखकर दुआएं मांगते हैं। कहते भी हैं साथी, कि तुम ज़ाहिरी अस्बाब में कोशिश करो फिर अल्लाह पर भरोसा करो, हाए!!! सोचो तो सही कि कितनी उलटी बात है।

नहीं मेरे दोस्तों अज़ीज़ो! मुझे ख़ुद ही एतराफ़ है कि मेरी बात आपको मुश्किल से समझ में आएगी। क्योंकि जो आदमी चल रहा हो मश्रिक़ की तरफ़, उसे मग़्रिब की तरफ़ फिरना पड़ेगा। आज तो हम सबकी ज़बानों पर यह है कि ज़ाहिरी अस्बाब में तुम कोशिश करो और उम्मीद अल्लाह से रखो। मेरे दोस्तो! यह रास्ता नाकामी का है। हाए!!! मैं कैसे समझाऊं कि तुमने अल्लाह के लिए किया ही क्या है? जिससे तुम अल्लाह से उम्मीद रखो, मेहनत करते हैं अस्बाब पर और उम्मीद रखते हैं अल्लाह से।

हज़रत रह० फ़रमाते थे कि *"अस्बाब पर निगाह रखकर अल्लाह से उम्मीद*

करना कुफ़्र का रास्ता है।"

कि अल्लाह से उम्मीद तो ग़ैर मुस्लिम भी रखते हैं, वह भी सही कहते हैं कि ज़ाहिरी अस्बाब हमारे ज़िम्मे हैं और करने वाली ज़ात अल्लाह की है। इतनी उम्मीद तो वे भी अल्लाह से रखते हैं। मैं हज़रत रह० की बात बता रहा हूं वह भी कहते हैं कि अल्लाह करेंगे मगर ज़ाहिरी अस्बाब बनाना हमारे ज़िम्मे है और मुसलमान भी यही कहते हैं कि अल्लाह करेंगे मगर ज़ाहिरी अस्बाब बनाना हमारे ज़िम्मे है। हज़रत रह० फ़रमाते थे कि तुम ज़रा बैठकर ग़ौर करो कि तुममें और उनमें क्या फ़र्क़ रह गया है?!

हमारे एक साथी को औलाद नहीं होती थी उसने एक ग़ैर–मुस्लिम डाक्टर से अपना इलाज कराया। उस डाक्टर ने सब देखभाल चैकअप वग़ैरह किए फिर उसने कहा कि कोई कमी नहीं है, मैंने तो अपना काम पूरा कर दिया है, अब सिर्फ़ ऊपर वाले के हुक्म की देर है। किसकी देर है? कि ऊपर वाले के हुक्म की देर है। जब उसने मुझे आकर यह बताया कि वह ग़ैर–मुस्लिम डाक्टर तो यह कह रहा था कि मैंने अपना काम पूरा कर दिया है, अब ऊपर वाले के हुक्म की देर है। तो मैं सोच में पड़ गया, कि हममें और उसमें क्या फ़र्क़ रह गया?!! वह भी यही कह रहे हैं कि अस्बाब मैंने बना दिए हैं, अब ऊपर वाला करेगा और हम भी यही कह रहे हैं कि अस्बाब हम बना लेते हैं अब करने वाली ज़ात अल्लाह की है। तो मैंने कहा कि हम मैं और उनमें फ़र्क़ ही क्या रह गया?!!!

मेरे दोस्तो अज़ीज़ो और बुज़ुर्गो! देखो हममें और उनमें फ़र्क़ यह है कि जो अल्लाह को करने वाला नहीं मानते, तो उनके और अल्लाह के दर्मियान अस्बाब ज़ाब्ता है और जो अल्लाह को करने वाला मानते हैं उनके और अल्लाह के दर्मियान अहकामात (हुक्मों) ज़ाब्ता (क़ानून) है, कि–

ऐ अल्लाह! मैंने नमाज़ पढ़ ली।
ऐ अल्लाह! मैंने सदक़ा दे दिया।
ऐ अल्लाह! मैंने सच बोल दिया।

अब करने वाली ज़ात तेरी है, मोमिन हुक्म पूरा करके उम्मीद करेगा और काफ़िर अस्बाब पूरे करके उम्मीद करेगा। ख़ूब समझ लो! उम्मीद दोनों अल्लाह ही

से करते हैं, बस इतना फ़र्क़ है कि एक मर्तबा हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक मुश्रिक को बुलाकर पूछा यह बताओ कि जब दुनिया में तुमको कोई नुक़्सान हो जाता है तो तुम उस नुक़्सान की तलाफ़ी (भरपाई) किससे कराते हो? इस मुश्रिक ने यह कहा जो अल्लाह आसमानों के ऊपर है, मैं इससे कहता हूं, तू वह मेरे नुक़्सान की तलाफ़ी करता है। तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: तब वह अल्लाह तुम्हारा काम बनाता है, तुम्हारे नुक़्सान को दूर करता है, फिर भी तुम उसके साथ बुतों को शरीक करते हो।

नहीं मेरे दोस्तो बुज़ुर्गो और अज़ीज़ो! हमारे और अल्लाह के दर्मियान कायनात ज़रीया नहीं है। बल्कि हमारे और अल्लाह के दर्मियान अहकामात ज़रिया है। अब रही बात कि अल्लाह ने अस्बाब क्यों बनाया? तो अल्लाह तआला ने अस्बाब सिर्फ़ इम्तिहान के लिए बनाए हैं। अल्लाह तआला यह देखना चाहते हैं, कि अस्बाब से ज़ाहिर होने वाली हाजतों (ज़रूरतों) को तुम हमारी तरफ़ फेरते हुई अस्बाब की तरफ़ फेरते हो, सिर्फ़ इतना सा इम्तिहान है। इसलिए यह सारा अस्बाब इम्तिहान के लिए है, चाहे हमारी दुकान, या सुलैमान अलै० की बादशाहत हो यह सब इम्तिहान के लिए है।

ऐसी बादशाही, कि सारी मख़्लूक़ ताबेअ

क्या बादशाहत थी सुलैमान अलै० की।

﴿قَالَ رَبِّ اغْفِرْ لِيْ وَهَبْ لِيْ مُلْكًا لَّا يَنْۢبَغِيْ لِاَحَدٍ
مِّنْۢ بَعْدِيْ اِنَّكَ اَنْتَ الْوَهَّابُ﴾

"ऐ अल्लाह! मुझे ऐसी बादशाही चाहिए जो मेरे बाद किसी को मयस्सर न हो"

ऐसी बादशाही कि सारी मख़्लूक़ ताबेअ जिससे चाहे जो काम ले। मगर किस के लिए? कि सिर्फ़ आज़माइश के लिए। अस्बाब किसी के पास हो, नबी के पास हो, या चाहे उम्मती के पास हो, आज़माइश के लिए हैं, अस्बाब में सबकी दो आज़माइश हैं।

एक आज़माइश इताअत की है।

और

एक आज़माइश गुमान की है।

कि तुमने अमल की निस्बत किधर की है। ये दो आज़माइशें हैं अस्बाब में, एक आज़माइश इताअत की है कि-जो अस्बाब हम तुमको देते हैं, तुम इनमें हमें भूल तो नहीं जाते।

सूरज का वापस निकलना

कि सुलैमान अलैहिस्सलाम घोड़ों का मुआना कर रहे थे, वैसे घोड़े इस वक़्त दुनिया में नहीं हैं, सारे ख़त्म हो गए। ऐसे घोड़े जो दौड़ते भी थे, उड़ते भी थे और समुंद में तैरते भी थे, ऐसे उम्दा घोड़े। उन घोड़ों का सुलैमान अले० मुआना कर रहे थे, इसी में असर की नमाज़ क़ज़ा हो गई कि सूरज डूब गया। अस्बाब के देखने में ऐसे मश्ग़ूल हो गए कि असर की-नमाज़ क़ज़ा हो गई। लेकिन बात यह है कि जिन्हें अमल के ज़ाया होने का ऐसा ग़म होता है, अल्लाह इनको ज़ाया नहीं करते। और फ़रमाया:

﴿رُدُّوهَا عَلَيَّ فَطَفِقَ مَسْحًا بِالسُّوقِ وَالْأَعْنَاقِ﴾

'ऐ अल्लाह! सूरज को वापस कर दे कि मेरी नमाज़ क़ज़ा हो गई है'

जिन्हें अमल के ज़ाया होने का सच्चा ग़म होता है, अल्लाह उनके अमल को ज़ाया नहीं करते। इसी लिए फ़रमाया कि सारी नेकियों का मिदार तक़्वे पर है, चुनांचे सूरज वापस निकला।

मैं आपको बता रहा था कि अस्बाब में एक इम्तिहान इताअत का भी होगा, कि ऐसा तो नहीं कि तुम नमाज़ को ज़ाया कर दो। एक बात और दूसरी बात यह है कि तुम अस्बाब में मुदई (दावा करने वाले) हो, जिसकी वजह से तुम यह सोचो या ख़्याल करो कि इस सबब से हम यह कर लेंगे या फिर तुम अस्बाब की निस्बत हमारी तरफ़ करते हो, कि सबसे नहीं अल्लाह करेंगे। ये अस्बाब तो हमारा इम्तिहान है, कि इसी बात पर इनकी आज़माइश हुई।

गोश्त का लोथड़ा, सुलैमान अलैहिस्सलाम की शाही कुर्सी पर?!!

कि सुलैमान अले० ने बड़ा नेक इरादा किया, तैय किया आज मैं सौ (100) बीवियों पर चक्कर लगाऊंगा, क्योंकि मुझे अल्लाह के रास्ते के लिए 100 मुजाहिद

तैयार करने हैं। (सौ लड़के पैदा करूंगा) नेक इरादा किया कि अपनी सौ (100) बीवियों के पास चक्कर लगाऊंगा, कि मुझे सौ (100) बेटे चाहिए, जो अल्लाह के रास्ते मे मुजाहदा करें, शैतान ने इनको भी यहां इनशाअल्लाह कहना भूला दिया। रिवायत में है, हालांकि खै़र का इरादा है, इसीलिए अल्लाह की मदद उसी काम में होगी, जो काम अल्लाह के हवाले किया गया है। इरादा चाहे दीन का हो या दुनिया का, तो सुलैमान अलै० ने नेक इरादा किया कि सौ मुजाहिद अल्लाह के रास्ते के लिए चाहिए और इस इरादे के साथ अपनी सौ (100) बीवियों से सोहबत की, पर सौ बीवियों में से सिर्फ़ एक बीवी को हमल ठहरा। और 99 बीवियों को कोई हमल नहीं ठहरा, सिर्फ़ एक बीवी को हमल ठहरा और उस बीवी से भी एक गोश्त का लोथड़ा पैदा हुआ, कि इस गोश्त के लोथड़े पर न कान, न हाथ, न पैर, न आंख और न मुंह, सिर्फ़ गोश्त का लोथड़ा और नीयत सुलैमान अलै० की थी मुजाहिद की। तो दाया ने इनकी बीवी से पैदा हुए उस गोश्त के लोथड़े को शाही कुर्सी पर लाकर रख दिया। कि यह पैदा हुआ है कुरआन में इसी तरह है–

﴿وَلَقَدْ فَتَنَّا سُلَيْمَانَ وَأَلْقَيْنَا عَلَىٰ كُرْسِيِّهِ جَسَدًا ثُمَّ أَنَابَ﴾

दाया ने उस जने हुए गोश्त के लोथड़े को सुलैमान अलै० की शाही कुर्सी पर क्यों डाला? क्योंकि वह कुर्सी पर डालने वाली चीज़ तो नहीं थी, फिर क्यों डाला कुर्सी पर? कि कुर्सी पर इस लिए डाला गया है कि सुलैमान अलै० को यह पता चले कि तुम अपनी बादशाहत से यह न समझो कि कुछ कर लेंगे।

अस्बाब पर अल्लाह का कोई वायदा नहीं

ग़ौर करो इस पर कि जिनके ताबेअ सारी मख़्लूक़, लेकिन सौ (100) बच्चों को पैदा करने के इरादे को अल्लाह को सामने न रखा कि जब बंदा किसी काम के इरादा पर अल्लाह को भूल जाता है तो फिर अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त अपनी याद दिलाने के लिए इसको इसके काम में नाकाम करते हैं। जिन्हें अल्लाह तआला याद आ जाए ऐसे हालात में, तो फिर अल्लाह इनके लिए रास्ते खोल देते हैं और जिन्हें अल्लाह याद नहीं आते इन हालात में, तो फिर वे आगे बे–बरकती का परेशानियों और मुसीबतों का शिकार हो जाते हैं।

इसलिए मेरे दोस्तों अज़ीज़ो! अस्बाब की हैसियत इससे ज़्यादा नहीं है।